।। नैतिक दायित्व–विकास की राह में मील के पत्थर।।

शिक्षा अर्थात वह संयम जिसके द्वारा इच्छाशक्ति के प्रवाह और विकास को वश में लाया जाता है । जो इच्छाशक्ति और विकास देश और समाज के लिये फलदायी हो वास्तव में यही शिक्षा कहलाने योग्य है । सार रूप में शिक्षा मन की एकाग्रता है न कि तथ्यों का संकलन । जो शिक्षा व्यक्ति को पैरों पर खडा करने लायक बनाये और समाज को एकता के धागे में पीरोये ।व्यक्ति जीवन निर्माण कर सके। मनुष्य बन सके। चरित्र निर्मण कर सके और समाज का दिशा दे सके ।ऐसी शिक्षा व्यक्ति ,देश और समाज का विकास कर सकती है ।आज का आदमी हुक्म जताना चाहता है,हुक्म पालन नही करना चाहता जबकि व्यक्ति को पहले आदेशो का पालन करना सीखना चाहिये आदेश देना तो स्वयं ही आ जाता है । समानता का लोप होता जा रहा है । दुर्दशा का कारण यही है ,जिससे समाज भी अछूता नही है । आज व्यक्ति अपने नैतिक दायित्वों काो भूलता जा रहा है ।उसका नैतिक दायित्व यह भी है कि वह अपने से नीचे वालों को शिक्षित करें,उनके व्यक्तित्व विकास के लिये सहायता करे । देश और समाज के हित को देखते हुए आज ऐसी शिक्षा की जरूरत है जिससे चरित्र निर्माण हो,बुध्दि का विकास हो,परमार्थ का भाव पैदा हो, जातीय दम्भ की दीवारें तोडकर व्यक्ति अपने पैरों पर खडा हो ।सच आज के युग मे जरूरत है नैतिक एवं स्वालम्बी शिक्षा की । ऐसी शिक्षा ही आत्म चिन्तन का सही मार्ग दिखा सकती है ।

सत्य प्राचीन अथव आधुनिक समाज का सम्मान नही करता । समाज को ही सत्य का सम्मान करना पडता है । सत्य ही सारे प्राणियों और समाजों का मूल आधार है ।सत्य कभी भी समाज के अनुसार अपना गठन नही करेगे । समाज को ही सत्य के अनुसार अपना गठन करना होता है । वही समाज श्रेप्ठ है जहां सर्वोच्य सत्यों का कार्य में परिणत किया जा सकता है । यह परिणति शिक्षा से ही सम्भव हो सकती है । जब व्यक्ति समय के सत्य को समझ लेगा तो यकीनन उसे कोई भेद की खाई डरा नही सकेगी । समाज को सत्य की कसौटी पर खरा उतरना होगा ।शिक्षा का उपयोग मानवता की भावनाओ में अभिवृध्दि के लिये करना होगा तभी शिक्षा समाज के लिये वरदान हो सकती है ।

छोटे बडे में भेद, जातीय निम्नता अथवा श्रेप्ठता की बात इंसानियत का अपमान है,कर्म के आधार पर आदमी की पहचान होनी चाहिये ।अपने से निम्न में बुराई में नही अच्छाई ढूढनी चाहिये ।परिवर्तन समय का चक्र है ,होगा पर शिक्षा के माध्यम से समाजोपयोगी बनाया जा सकता है ।आदमी और आदमी के बीच की दूरियां खत्म की जा सकती है । इसके लिये आवश्यक है सद्प्रे,अकपटता एवं धैर्य की । जैसाकि कहा गया है जीवन का अर्थ ही वृध्दि है अर्थात विस्तार यानि प्रेम है ।इसलिये प्रेम जीवन है और स्वार्थपरता मृत्यु । मनुष्य हो अथवा राप्ट्र बडा बनने के लिये दृढ विश्वास,ईर्प्या और सन्देह का अभाव और जो व्यक्ति सन्मार्ग पर चलने में और सत्कर्म करने में संलग्न हो उसकी सहायता करना आवश्यक होता है ।मनुष्य का आदर्ध परमात्मा होना चाहिये क्योंकि वही एक अविनाशी है और हम उसके अंश है ।अतः हमें जन्म आधारित व्यवस्था की जगह कर्म आधारित व्यवस्था का सृजन करना होगा ।इस व्यवस्था से मानव धर्म की उत्पत्ति होगी जो समाज,राप्ट और विश्व के लिये हितकर होगी । मानव धर्म ही सत्य की कसौटी पर खरा उतर सकता है । दुनिया को जोड सकता है । इस प्रकार के बोध हमें नैतिक शिक्षा ही करवा सकती है, इसके लिये हमे आने दायित्वों के प्रति प्रतिबध्दता का होना होगा ।

ज्ञान मनुष्य में अन्तर्निहित होता है । वाह्य जगत तो सहायक मात्र होता है । वाह्य जगत तो अन्तर्निहित ज्ञान को पूर्णता अथवा अपूर्णता प्रदान करता है । वास्तव में शिक्षा का अर्थ पूर्णता हेाता है और नैतिक शिक्षा इसे जीवन्तता प्रदान करती है। सच शिक्षा तो वह है जो साधारण व्यक्ति के जीवन संग्राम को समर्थ बनाये, चरित्र बल का निर्माण करें। परहित भावना में अभिवृध्दि करें । व्यक्ति को सिंह की भांति साहसी बनाकर अपने पैरो पर खडा होने लायक बनाये। वही शिक्षा/नैतिक शिक्षा राप्ट्र एवं समाजोपयोगी हो सकती है । नैतिक शिक्षा, उत्थान की राह में मील का पत्थर साबित हो सकती है बशर्ते व्यक्ति अपने नैतिक दायित्वो एवं संकल्पों के प्रति ईमानदारी बरते ।

नन्दलाल भारती